होली महोत्सव : व्यष्टि-समष्टि-यज्ञ-योग जनित अद्वितीय रसोन्मय सांस्कृतिक पर्व : संक्षिप्त चिंतन

डॉ. शिव कुमार चतुर्वेदी
(अकिंचन पथिक, बावरा बनजारा)

भारतीय सांस्कृतिक परंपराओं में व्रत, उपवास, त्योहार, पर्व एवं उत्सवों को विशेष, महत्त्वपूर्ण, गौरवपूर्ण एवं समरसता प्रदायक उच्च स्थान प्राप्त है। ये उत्सव मानवीय अंत:करण जनित एवं उद्वेलित सात्त्विक भावनाओं को व्यक्तिगत, पारिवारिक, सामाजिक एवं राष्ट्रीय स्तरों पर पुन:-पुन: जाग्रत कर लौकिक जीवन प्रवाह को अधिक आशापूर्ण, विश्वासपूर्ण, समरसतापूर्ण एवं आनंदमय बनाने का प्रमुख माध्यम बनकर हमारे सामने आते हैं। वस्तुत: इन त्योहारों में निहित चेतना के स्वर समाज के विभिन्न स्तरों और बहुलताओं को एकता के समरस सूत्र में पिरोते हुए एक बहुआयामी योग-वृत्ति का ही गुणगान करते हैं। यहाँ यह भी इंगित करना सटीक लगता है कि जन-जन स्थित, घर-घर आंदोलित, गाँव-गाँव प्रचलित इन्हीं सांस्कृतिक परंपराओं में निहित शक्ति के सहारे ही भारतीय समाज सैकड़ों वर्षों की राजनैतिक-आर्थिक-मानसिक परतंत्रता की–जो कि विदेशी आक्रमणकारियों ने थोपी थी–भयावह एवं विध्वंसक परिस्थितियों में भी अपने शाश्वत, बहुस्तरीय, बहुआयामी एवं विविधतापूर्ण जीव-जगत्-जगन्नाथ में समाहित अपार धार्मिक-क्षेत्र को बहुत सीमा तक बचाने में सक्षम हो सका। हमने यातनाएँ सहीं, अत्याचार सहे, संकट सहे, अपमान सहे, लूट-खसोट सही, क्रूरतापूर्ण बड़े स्तर पर हत्याएँ सहीं, लेकिन अनुक्रमणीय रूप से टूटे नहीं, बिखरे नहीं, नश्वरता को प्राप्त नहीं हुए, बल्कि समय-समय पर स्वतंत्रता देवी को प्राप्त करने हेतु तीव्र विरोधात्मक बलिदान-वेदी पर भी चढ़े।

चलो, आज होली खेलें। यह पावनोत्सव स्वयं में विविधताओं को समेटे हुए व्यष्टि-समष्टि-विकारों की, भेद-भाव की, रजस-तमस स्वरूप प्रकृति के गुण-प्रवाहित कलुषता की होरी जलाकर समरस-चेतना को जाग्रत करने का एक महान, अद्वितीय पर्व है। चलो चलें साथ-साथ अवलोकन करते हुए, गाते हुए, बजाते हुए, नृत्य करते हुए होली के रंगों में, रसों में अपने आपको डुबोने हेतु।

यहाँ विस्तृत ऐतिहासिक मीमांसा न करते हुए यही कहना न्यायसंगत होगा कि ऐतिहासिक दृष्टिकोण से होली उत्सव अति पुरातन है और जैसी मान्यता है कि होली का प्रथम संबंध पौराणिक कथा भक्तप्रवर प्रह्लाद की बहिन 'होलिका' से निर्धारित होता है। होलिका अपने पिता हिरण्यकशिपु की आज्ञा से प्रह्लाद को मृत्युदंड देने हेतु अपने साथ लेकर प्रज्वलित अग्निकुंड में प्रवेश हुई थी, परंतु स्वयं तो भस्मीभूत हो गई और प्रह्लाद पूर्णरूपेण सुरक्षित रहे। इस उत्सव का संक्षिप्त वर्णन विविध पुरातन ग्रंथों–नारद पुराण, भविष्य पुराण, जैमिनी मीमांसा सूत्र, कथक गृह सूत्र आदि–में प्राप्त होता है। इस महोत्सव को बसंत महोत्सव एवं काम महोत्सव भी जाना जाता है तथा विभिन्न पुरातन कथाओं से–जैसे भगवान शिव द्वारा कामदेव को भस्म करना–जुड़ा हुआ है। विभिन्न धार्मिक संप्रदाय एवं शाखाएँ भी अपने-अपने तरीके से इस महापर्व से जुड़कर विविध रूपों में चार चाँद लगाते हुए आनंद प्रवाह में सराबोर हो जाते हैं।

बसंत ऋतु आ गई है, नववर्ष की शुरुआत है, खेतों में अन्न ब्रह्म-स्वरूप जीवन का आधार नई फसलों का आगमन, नई उमंगें, नया उत्साह। वैसे तो होली का त्योहार संपूर्ण भारतवर्ष में बड़े हर्षोल्लास के साथ मनाया जाता है, साथ-साथ समस्त विश्व में

जहाँ-जहाँ भरतवंशी बस गए हैं, बड़ी धूमधाम से मनाने की प्रक्रिया प्रवाहित हो रही है। परंतु ब्रज क्षेत्र की होली का अपना विशेष महत्त्व है, विशेष आनंद है, विशेष रसोन्माद है; और यह भूमि है श्री राधाकृष्ण की परम दिव्य लीला-स्थली, जहाँ पाँच हजार वर्ष पहले ये दिव्यातिदिव्य लीलाएँ प्रकट हुई थीं। इन भगवद्लीलाओं में महारास लीला मुकुटशिरोमणि रूप में हमारे सामने आती है। इस लीला की मीमांसा करते हुए आदि भागवताचार्य शिरोमणि श्रीधर स्वामीजी लिखते हैं कि कामदेव ने ऋषियों को जीता, महर्षियों को जीता, देवर्षियों को जीता और यहाँ तक कि इंद्रदेव पर विजय पाई, ब्रह्माजी पर विजय पाई, भगवान शंकर की अगाध समाधि भंग कर उनको विचलित किया, और अब वही विजयगर्वपूर्ण कामदेव भगवान कृष्ण को ललकार रहा है। भगवान कृष्ण ने यह लड़ाई लड़ी दिव्य ब्रजक्षेत्र में, प्राकृतिक सौंदर्य की समग्रता से भी परे अलौकिक चाँद की चाँदनी, अलौकिक पुष्प-गंधों से परिपूर्ण लीला-स्थली और परम सौंदर्य परिपूर्ण ब्रजबालाओं के रतिपूर्ण चेष्टाओं, हाव-भावों के मध्य और कामदेव पराजित होकर उन्हीं के सुपुत्र अनिरुद्ध के रूप में प्रकट हुआ। यह वही कामदेव है, जो कि ऋग्वेद में ब्रह्मांड-प्रकृति सर्जन का हेतु आदि 'मन' का प्रथम बीज घोषित हुआ है, और यह वही कृष्ण हैं, वही 'मनमथ-मन्मथाय' करोड़ों कामदेवों के भी काम-स्वरूप मन का मंथन करनेवाले आदि नारायण। यह कामविजयी लीला ही 'रसो वै सः' ब्रह्म की दिव्यातिदिव्य रस-धारा प्रवाहित रासलीला है और उसी की एक अंगोत्सव है ब्रज की होली, भारतवर्ष की होली, विश्व की होली—विशुद्ध प्रेमरस की होली।

होली-उत्सव की शुरुआत होती है 'होलिका-दहन' से। राक्षसीवृत्ति धारक होलिका तो जलकर भस्म हो गई और हरिभक्त शिरोमणि प्रह्लाद को तो आँच तक न आई। आज के समय में हम उसी घटनाक्रम के आधार से प्रेरित होकर अपने घर की, गाँव की, मुहल्ले की, आस-पड़ोस की अनुपयुक्त जलनशील वस्तुओं, लकड़ियों को इकट्ठा करके होली बनाते हैं और होलिका दहन के समय नई फसलों के नए अनाज के अपरिपक्व दानों को लेकर अग्नि प्रज्वलित कर होली में उनका हवन करते हैं। यहाँ न तो वैदिक मंत्र है और न वैदिक विधि-विधान। बस उपस्थित है समस्त समाज—ऊँचे-नीचे, गरीब-अमीर, छोटे-बड़े, बालक-वृद्ध, पढ़े-अनपढ़, सभी वर्णों के एक साथ मिलकर इस 'यज्ञ' को पूर्ण करते हैं—गाते हुए, नाचते हुए, भक्त प्रह्लाद की जय-जयकार करते हुए। वस्तुतः यह एक 'सामाजिक-यज्ञ' है, जो आवाहन करता है कि हम सभी मिलकर अपने अंदर निहित ईर्ष्या, द्वेष, घृणा, हिंसा, लोभ, लालच, तमस-काम, क्रोधादि जनित अभद्र और समस्त 'असत' आचार-विचारों को इसी राक्षसी-वृत्ति होलिका के साथ ही जलाकर भस्मीभूत कर दें; साथ में भस्म करें सामाजिक कलुषित को, भ्रष्टाचार, दुराचार, अत्याचार जैसे अमानवीय कुकर्मों को। यही तो सच्चा 'होलिका-दहन' है और इस 'यज्ञ-वेदी' में से अव्यक्त प्रह्लाद-स्वरूप सतवृत्तियों को बाहर निकालकर व्यष्टि-समष्टि रूप से व्यक्तिगत, पारिवारिक, सामाजिक, राष्ट्रीय एवं वैश्विक स्तरों पर समग्र कल्याणजनित वृत्तियों का वरण करें।

इसी पुरातन घटना को, भक्त-भक्ति-भगवान त्रिधा-स्वरूपिणी शक्ति को शाश्वत रूप प्रदान करते हैं मथुरा से कोसी शेरगढ़ मार्ग पर फालैन गाँववाले एक अनूठी होली जलाकर। होलिकादहन के दिन गाँव का एक पंडा वहाँ स्थित प्राचीन प्रह्लाद कुंड में स्नान करके, परंपरागत प्रह्लाद मंदिर में पूजा करके गाँव के चौक में लगाई गई विशाल होली की जलती अग्नि की लपटों के भीतर से छलाँग लगाकर होली से बाहर निकलता है—अग्नि से बिना झुलसे हुए या जले हुए। इस अद्भुत कर्म के लिए तत्पर पंडा बहुत पहले से तपक्रिया, यम-नियम में नियमित रूप से संलग्न रहता है, और साथ-साथ भक्त प्रह्लाद की पूजा-पाठ करता रहता है।

होलिकादहन के बाद होली महोत्सव के दूसरे चरण में होली में बची हुई राख (यज्ञ की अवशेष राख) सहित धूल-मिट्टी व कीचड़ से भी परस्पर होली खेलना शुरू होता है। घर से बाहर निकलकर इस कीचड़ सहित परस्पर मिलन (आधिभौतिक गंदगी) रजस-तमस मानववृत्तियों जनित घृणित भेदभाव व्यक्त करता हुआ परस्पर सहनशीलता को वरण करने का आमंत्रण देता है। इस मानव देह की स्थिति भी मिट्टी-कीचड़ जैसी ही तो है—अंदर व बाहर से, और अंत में अग्नि चिता पर भस्मीभूत होकर इसे राख ही तो बनना है : उसी होलिका की राख से, असत, अभद्र वृत्तियों की राख से खेलकर ही तो हम उस परम सत्य को प्राप्त करने का, पहिचानने का सुअवसर पाते हैं, जो इस मिटटी-रूपी शरीर में मिटटी-रूपी आधिभौतिक जगत् में अव्यक्त आत्मा-परमात्मा स्वरूप में छिपा बैठा है।

चलो ये खेल समाप्त कर इस धूलि-कीचड़ से सनी देह को जल से धोकर, पवित्र बनाकर सुंदर सुगंधमय रंगों से होली खेलें; सात्त्विक वृत्ति में अंतःकरण के समस्त आयामों को सराबोर कर

प्रकृति की उन्मत्त सुंदरता और उसके विविध रंगों का आलिंगन करने हेतु होली के तीसरे या अंतिम चरण में प्रवेश करें। अबकी बारी है अपने-अपने शरीरों (स्थूल, सूक्ष्म एवं लिंग शरीर) को, समग्र अंत:करण (मन, बुद्धि, अहंकार एवं चित्त) को विविध रंगों में सराबोर करने की; विभिन्न प्रेम गीतों में सराबोर करने की; विभिन्न नृत्यकलाओं में सराबोर करने की और जब कुछ सराबोर हो जाए एवं जगत की जब भयानकता, उद्दंडता, अभद्रता, शोकमयतादि हमारे चित्त से ओझल हो जाए, तब जीवात्मा में उद्वेलित दिव्य प्रेम, आनंद एवं रस अपने परम प्रेमी को ढूँढ़ने हेतु, आलिंगन करने हेतु तत्पर है। परंतु वह कौन है, कहाँ है, जरा योगारूढ़ होकर सुनो–

''सखी अंबर भरे गुलाल, आज मेरे ब्रज में होरी है।''

श्री ब्रजधाम में श्री राधा-माधव अपने समस्त परिकर सहित दिव्यातिदिव्य रसोन्मादित होरी खेल रहे हैं–चलो-चलो सखी–

''चलो सखी ब्रज में आज मची होरी।
श्रीराधे-ब्रजराज संग सब मिल खेलें होरी।''

श्री ब्रजराज, अखिल ब्राह्मण नायक, परब्रह्म, परमात्मा, पुरुषोत्तम, रसाधिपति, किशोर-किशोरी दिव्य स्वरूपों में व्यक्त आज समस्त ब्रजवासियों के साथ, समस्त चराचर जगत् के साथ विविध रंग-रंजित हो होली खेल रहे हैं। इस ब्रह्मांड के विविध रंग-बिरंगे उनकी माया के रंग ही तो हैं और देखो तो सखी इस नंदगाँव-बरसाने की लट्ठमार होरी के महापर्व पर होरी खेलन कूँ देवगण, अप्सराएँ, देवांगनाएँ, ऋषिगणादि भी गोपी-ग्वाल बने रसानुभूति लेने आए हैं। कैसा अद्भुत दृश्य है–ललिता सखी अपनी सखियँन सों कह रही हैं–

''होरी खेलन आयो श्याम आज जै रँग में बोरी री।
मुरली लेवौ छीन जाए केसर में बोरो री!''

चलो सभी मिलकर हर्षोल्लास के साथ गायन, वादन, नृत्य करते हुए, रंग, अबीर, गुलाल बरसाते हुए, परस्पर सभी को विविध रंगों में सराबोर करते हुए–इस तरह की बाहरी पहिचान पूरी तरह छुप जाए–इस विशाल प्रेम-भक्ति-रस उद्वेलित राष्ट्रीय-सांस्कृतिक महापर्व में संस्कारित होने का बीड़ा उठाएँ। यह कोई हुड़दंग नहीं है, विभिन्न सत-रसों में सनी एवं हास्य-व्यंग्य भावों को भी अपने में सन्निहित किए जीव की जगन्नाथ से होली खेलने की परम कल्याणमयी तीर्थयात्रा है। आधुनिक परिवेश में अभद्रता, अश्लीलता, अराजकता मादक पदार्थों का पान जैसी तमाम व्यक्तिगत एवं सामाजिक बुराइयों को होरी में प्रवेश अमंगलकारी है, प्रदूषण है, अनैतिकता जैसी बीमारी है, और हम सभी का परम कर्तव्य है कि सत-शिक्षा लेकर एवं देकर इन सभी बीमारियों को दूर करने का अनवरत प्रयास करते रहें। ये होरी का परम पावन महापर्व समस्त रजस-तमस वृत्तियों जनित बुराइयों का होलिका-अग्नि में आहुति से शुरू होकर क्रमबद्ध योगारूढ़ करता हुआ परम कल्याण मय कर्म-ज्ञान-भक्ति योग की अंतिम सीढ़ी भक्ति-रस-योग तक पहुँचाता है और जहाँ हम अधिकारी बनते हैं दिव्यातिदिव्य महाभाव रस ओतप्रोत श्रीराधेरासबिहारी के संग होरी खेलने के, लीला रसास्वादन करने के। इसी मनमोहक रसभाव की विशेषता की एक झलक का रसास्वादन करें ब्रज के इस लोकगीत में–

''होरी को रस रसकहि जानै, रस कूँ कूर कहा पहिचाने।
जो रस ब्रज के माँहि, सो रस तीन लोक है नाहि।
देख-रेख या ब्रज की होरीय, ब्रह्मादिक मन ललचाय।।''

वि